^Hke*

Hkkx &ö

u=k ghu **^v/*** vkj u=kk oky eu"; d ij 'kkjhfjd vkj ekufld thou e] cvr **^vrj*** g A

^v/k* pkg viuh vU; Kku bfUn;k d lgkj bl txr dk &

le>u
c>u
tkpu
tkuu
vnktk yxku
fu'p; dju
;ktuk cuku
Qlyk dju
thou&l/ cuku
de&fØ;k dju

dh dkf'k'k djrk g] ijr fQj Hkh mud 'kkjhfjd] ekufld vkj /kfed eMy dk Kku Åijh lk] v/jk] Vkg ek=k] vnkt ek=k] xyr] ,o Hke&e;h gh g] ftl d vk/kj ij mudk lkjk thou 0;rhr gkrk g A

;fn ,l v/ dk dgh ^u=k&T;kfr* fey tk, rk og gjku gkxk fd ml d dfYir fd, g, lkl kfjd vnkt] le>] Kku] fu'p;] p;u] vkj Qly] **vlfy;r** (reality) l fcYdy foy{.k] foijhr] dM ,o Hke&Hkyko gh Fkk A og nfu;k dk **vlyh Lo:i e** n[k&n[k dj gjku ,o vk'p;pfdr gkxk A

;g **n"Vghu ^Hke&Hkyko*** v/k d gj &

[;ky
lkpuh

fu'p;
J¼k
Hkkouk
de
fØ;k
/e
vFkok **thou d gj i{k e ioRr gkrk g** A

v/k dk ^Hke&Hkyko* 'kjhj d **,d vx d** vHkko l mRiUu gkrk g

tho dk ekufld ^Hke&Hkyko* **vge l mRiUu gvk g** A

u=k ghu v/k dkb&dkb gh gkrk g A

ijr **ekufld ^Hke&Hkyko* rk lkj lkj** vFkok nfu;k dk] **Hkr&ir dh rjg fpidk gvk g** A

v/k dk ^Hke&Hkyko* rk mud **,d thou rd lhfer g**] ekr d ckn vxy tUe e **lkFk ugh tkrk** A

ijr ekufld ^vKkurk* rk db tUek l gekj lkFk fpidh gb g vkj eju d ckn Hkh vxy tUek e lkFk gh fpidh jgxh A

bl rjg v/k d n[k&Dy'k rk ,d tUe e gh [kRe gk tk,x A

ijr ekufld vKkurk d ^Hke&Hkyko* l mRiUu n[k&dy'k rk gekjh eR; d ckn **vxy tUek e Hkh lkFk gh tk,x** vkj tho d **^Dy'kk* dk dkb vUr ugh vk,xk** A

r/g Hky fl tfe tfe ejn fru dn u pdfu gko AA(i· öööû)

vfud tkfu Hkfevk Hke Hkhrfj l[kfg ukgh ijolk j AA(i· þúý)

vfud tur Hke tkfu ekfg AA
gfj fleju fcu ujfd ikfg AA (i· ûûöý)

v/ viuh ^deh* dk fdlh u=k oky dh lgk;rk y dj viuh ef'dyk dk fdlh gn rd de dj ldr g A

ijr ekufld **vKkurk d ^Hke&x<*** e dkb fdlh dh lgk;rk ugh dj ldrk] D;kfd bl ekufld **v/ xckj d v/j&[kkr e rk lkj tho gh Ql g, g** A

tc bl v/j [kkr d Hke&x< d vnj lkj tho gh Hke&Hkyko e my> g] rk **dku fdlh dk lgh ^vkRe&idk'k* dh jkg crk ldrk g **

ukud v/k gkb d nl jkg lHkl egk, lkFk AA (i· ûÞú)

अंधा आगू जे थीऐ किउ पाधरु जाणै ॥
आपि मुसै मति होछिऐ किउ राहु पछाणै ॥ (पृ. ७६१)

अंधे कै राहि दसिऐ अंधा होइ सु जाइ ॥
होइ सुजाखा नानका सो किउ उझड़ि पाइ ॥ (पृ. ६५४)

अन्हा आगू जे थीऐ सभु साथु मुहावै ॥ (वा. भा. गु. ३५/२)

bl rjg tk ^/e ipkj* gk jgk g] lc bl **^Hke&Hkyko* d fnekxh Kku d [kk[ky vk/kj ij gk jgk g** A ;gh dkj.k g fd bru ikB] itk] Hktu] HkfDr] de&dkM] lxBu] lRlx lekxek] dhru v[kkM] dFkk&0;k[;ku] /kfed y[k] /kfed ijp] ,o /kfed ipkj d gkr g, Hkh] ^txr* **bl ^Hke x<* d v/dkj [kkr e l fudy ugh ldk** A vfir **ckotn bru ^/ek* vkj /e ipkj d] ^tho* dh ekufld vkj vè;kfRed gkyr fxjrh tkrh g vkj ekufld vox.k ?kVu dh vi{kk c<r tk jg g** A

v/ viuh 'kkjhfjd deh dk egll djr g ,o iHk dh bPNk le>dj lc l 'kkfUriod viuk dfBu thou 0;rhr djr g A

ijr **tho dk viuh ekufld vKkurk d ^Hke&Hkyko* d fo"k;** e &

irk gh ugh
l> gh ugh
xkj gh ugh djr
egll gh ugh djr
cijokg g

u tkuu dh vo';drk gh irhr gkrh g

pkg x:vk] vorkjk] lrk] HkDrk] egki:"kk u viuh&viuh ck.kh vkj min'kk e crk;k g fd&

1- **lkjk tx ^Hke&Hkyko* gh g** A

2- bl **Hke x< d n[kk&dy'kk dk Li"V C;ku g**] tk gekj thou d gj i{k d **vuHko e vkr g** A

3- bl n[knk;h ^Hke&x<* e l **fudyu** dh lPph ,o iDdh ;fDr ,o **Li"V lk/u Hkh crk, x, g** A ijr fQj Hkh ge bu noh; **min'kk ij Hkjklk ugh vkrk**] D;kfd ge viu **^Hke* dh vKkurk dk gh ^lp* ekudj cB g** A bu min'kk dk ge Åijh eu l i<&lu dj viu&vki dk >Bh rlYyh n nr g ;k budh rjQ l tku&c> dj epy ;k <hB g, g A

लोगु जानै इहु गीतु है **इंहु तउ बहम बीचार ॥**
जिउ कासी उपदेशु होइ मानस मरती बार ॥ (पृ. ३३५)

हरि कथा हरि जस साधसंगति सिउ
इकु मुहतु न इहु मनु लाइओ ॥ (पृ. ७१२)

माधवे किआ कहीऐ भ्रम ऐसा ॥
जैसा मानीऐ होइ न तैसा ॥ (पृ. ६५७)

यह मानसिक अज्ञानता का 'भ्रम – भुलाव', **समस्त त्रि – गुणी मायिकी मंडल में हर जीव के –**

शारीरिक
मानसिक
आर्थिक
विद्यक
भाईचारिक
वैज्ञानिक
धार्मिक
अध्यात्मिक

जीवन में गुप्त रूप में प्रबिष्ट और प्रवृत्त हैं ।

हम इस मानसिक 'भ्रम – भुलाव' में अनेक जन्मों से पलच – पलच कर दुखी होते रहे हैं और अभी भी दुखी हो रहे हैं । यह 'भ्रम – भुलाव' मरने के बाद भी हमारे अगले जन्मों में साथ ही जाएगा और इसी तरह हम –

पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।। (पृ. १३३)

के न समाप्त होने वाले दुखदाई 'चक्कर' में फँस कर दुखी होते रहेंगे ।

जब तक **हमारे अंदर नाम का 'आत्म – प्रकाश' नहीं होता**, और यह मानसिक **'भ्रम का अंडा' नहीं फूटता, हम इसी 'भ्रम – गढ़' के अँधकार खाते में ही विचरण करते रहेंगे** ।

फूटो आँडा भरम का मनहि भइओ परगासु ।।
काटी बेरी पगह ते गुरि कीनी बंदि खलासु ।। (पृ १००२)

यह मानसिक **'भ्रम – भुलाव'** ही हमें अपने **आन्तरिक भ्रममयी अँधकार को 'महसूस' नहीं होने देता** । इस लिए इस के **इलाज की ज़रूरत ही नहीं प्रतीत होती** ।

ऐसा तैं जगु भरमि लाइआ ।।
कैसे बूझै जब मोहिआ है माइआ ।। (पृ – ६२)

जिस तरह जीवों के मनों में धर्म, पाठ, पूजा, कर्म – कांड, धार्मिक प्रचार और परमात्मा के विषय में **अत्यंत भ्रम – भुलाव प्रवृत्त हैं**, उसी तरह हमारे –

eu
fpr
cnf/
lkp
fu'p;k
J¼k
Hkkouk
de
fØ;k

e Hkh ;gh ^Hke&e;h* ekf;dh v/dkj dk cky&ckyk vkj 0;ogkj g

gekjh fnekxh ekufld &

l;kui
mDfr;k
;fDr;k
fo|k
fo|d <kpk
foKku
vk/fud vfo"dkj
uohu lH;rk

Hkh blh ekf;dh ^Hke&Hkyko* dh vKkurk d ^v/dkj* l gh mRiUu gkrh vkj iQfYyr gkrh g A

,lh ekf;dh Hke&Hkyko dh **fo|d fMxfj;k** dh ikflr;k ij ge xo djr g vkj vdM fQjr g rFkk **Hky&Hkn] fonoku vkj vQykru dgykdj viu vge dh vKkurk dk vkj c<k jg g** A

bl Hke&Hkyko e ge viu ^vkRe&rr* vFkok **^uke* dh jk'kuh l vkj nj tk jg g** A

ifM ifM y>fg ckn o[kk.kfg
fefy ekbvk ljfr xokb AA (i· ûûýû)

ifM ifM Hkyfg pkVk [kkfg AA
cgr flvk.ki vkofg tkfg AA (i· öøö)

लिखि लिखि पड़िआ ।। तेता कड़िआ ।। (पृ ४६७)

इकि पाधे पंडित मिसर कहावहि ।।
दुबिधा jkr egy u ikofg AA (i· öúþ)

gekj ekufld vkj ekf;dh thou d fy, bu fo|d vkj oKkfud i<kb;k dh **Hkh vko';drk g**] D;k fd bud nokjk l[k vkj foykl d u,&u, lk/u ikIr gkr jgr g A

परंतु इन विद्यक और वैज्ञानिक पढ़ाईयों द्वारा प्राप्त सुरव और विलास इसी जन्म तक सीमित है । इन सुरवों में प्रवृत्त्त और मस्त होकर, **सदैवीय सुरवों के स्त्रोत,**

अपने परम 'आत्म – तत्' अथवा 'नाम', **से बेपरवाह और विमुख होना ही हमारा – मानसिक भ्रम भुलाव है ।**

पड़ि पड़ि पंडित बेद वखाणहि माइआ मोह सुआइ ।।
दूजै भाइ हरि नामु विसारिआ मन मूरख मिलै सजाइ ।। (पृ. ८५)

पड़ि वादु वखाणहि सिरि मारे जमाकाला ।।
ततु न चीनहि बंनहि पंड पराला ।। (पृ २३०–३१)

पड़णा गुड़णा संसार की कार है अंदरि तृसना विकारु ।।
हउमै विचि सभि पड़ि थके दूजै भाइ खुआरु ।। (पृ ६५०)

पड़हि मनमुख परु बिधि नही जाना ।।
नामु न बूझहि भरमि भुलाना ।। (पृ १०३२)

परंतु हम अपने 'आत्म – तत्' अथवा नाम के प्रकाश रूपी **'तत् – ज्ञान' को पूर्णतया ही भूल गए हैं ।**

इस 'तत् – ज्ञान' या 'अनुभव प्रकाश' के विषय में आदि से ही गुरूओं – अवतारों ने हमें आत्मिक उपदेश दिये थे – परंतु हम इन सच्चे – पवित्र उपदेशों का पाठ कर लेते हैं और भ्रम – मयी 'बुद्धि' द्वारा खोखली व्याख्या करके **भले – भद्र बनकर घमन्ड में चूर रहते हैं** । हमें यह भ्रम है कि यह गुरबाणी के सच्चे – पवित्र उपदेश **हमारे ऊपर लागू नहीं होते** ! शायद किसी और अज्ञानी के लिए ही कहे गए होंगे ।

सच तो यह है कि यदि हमारे जीवन के व्यवहार को गौर से परखा जाए तो सिद्ध होगा कि –

हमारा **अहम** ही हमारा	– **'प्रभु'** है !
'मैं – मेरी' की पूर्ति करनी ही हमारी	– **पूजा है** !
'अहम' की गुलामी करनी ही हमारा	– **धर्म है** !
मायिकी **भ्रम – भुलाव में खचित होना** ही हमारा	– **'जीवन आदेश' है** !

मेरी मेरी करते जनमु गइओ ।। (पृ. ४७६)

हउ मेरा जगु पलचि रहिआ भाई कोइ न सिक ही केरा ।। (पृ ६०२)

मेरी मेरी धारि बंधनि बंधिआ ।। (पृ. ७६१)

साकत मूड़ माइआ के बधिक विचि माइआ फिरहि फिरंदे ।।
तृसना जलत किरत के बाधे जिउ तेली बलद भवंदे ।। (पृ ८००)

सो संचै जो होछी बात ।।
माइआ मोहिआ टेढउ जात ।। (पृ ८६२)

परंतु गुरबाणी तो हमारे इन **'भ्रम – भुलाव' के गलत निश्चयों के विपरीत हमें** यूँ ताड़ना करती है –

कूड़ु राजा कूड़ु परजा कूड़ु सभु संसारु ।।
कूड़ु मंडप कूड़ु माड़ी कूड़ु बैसणहारु ।।
कूड़ु सुइना कूड़ु रुपा कूड़ु पैन्णहारु ।।
कूड़ु काइआ कूड़ु कपड़ु कूड़ु अपारु ।।
कूड़ु मीआ कूड़ु बीबी खपि होए खारु ।।
कूड़ु कूड़ै नेहु लगा विसरिआ करतारु ।। (पृ ४६८)

झूठी दुनिआ लगि न आपु वञाईऐ ।। (पृ ४८८)

झूठा तनु साचा करि मानिओ जिउ सुपना रैनाई ।। (पृ २१६)

न किस का पूतु न किस की माई ।।
झूठै मोहि भरमि भुलाई ।। (पृ ३५७)

सुणि बावरे तु काए देखि भुलाना ।।
सुणि बावरे नेहु कूड़ा लाइओ कुसंभ रंगाना ।। (पृ ७७७)

हमारे ऐसे कूड़, खोखले, दुखदायी, जीवन का **मूल कारण** यह है कि हम जन्म – जन्मों से इस **मायिकी 'भ्रम – भुलाव' में जीते, विचरण करते और मरते आए हैं, जिस कारण यह कूड़ माया का 'भ्रम – भुलाव' ही हमारा जीवन आधार या धर्म बन चुका है** । इसी कारण मायिकी **'भ्रम – गढ़'** को समझने, बूझने, जानने, पहचानने की **आवश्यकता ही नहीं प्रतीत होती** और इसमें से निकलने का **ख्याल या प्रयत्न तो क्या करना था** !

यदि हमारा व्यापक मायिकी **'भ्रम – मयी' 'निश्चय' सही और सुखदायी होता तो इतने धर्म और धार्मिक प्रचार के बावजूद – 'इन्सानियत'** –

इत्तफाक
मेल मिलाप
प्यार
सेवा

परोपकार
हमदर्दी
मैत्री भाव
शांति
दया
एकता
क्षमा
धैर्य
नम्रता
सत्
संतोष

आदि, **दैवीय गुणों से 'वंचित' न होती ।**

बिजली के करंट (electric current) के विषय में –

सुना – सुनाया
पढ़ा – पढ़ाया
सीखा – सिखवलाया
जान – बूझ
किताबी

ज्ञान या जानकारी –

ऊपरी सी
खोखली
अधूरी
टोह मात्र
अंदाजा
दिमागी कसरत

ही है, जो हमारे **दिमागी ज्ञान इन्द्रियों तक सीमित है ।**

इस दिमागी ज्ञान के मुकाबले, बिजली के करंट का **शारीरिक 'स्पर्श' होने पर जो निजी अनुभव** (personal experience) **का ज्ञान होता है**, वह दिमागी ज्ञान से **विलक्षण और कुछ और ही प्रतीत होगा ।**

यह करंट का **'निजी अनुभव'** ही 'बिजली' का **वास्तविक और मूल 'तत्–ज्ञान' है ।**

इस **'निजी अनुभव' के बिना** हमारा सारा ज्ञान सिद्धांतिक, इलमी, कल्पित किया हुआ (theory), विचारात्मिक, ख्याली और **दिमागी कसरत ही है ।**

इस **मनोकल्पित ख्याली जानकारी को, बिजली के करंट का वास्तविक 'तत्–ज्ञान' समझना ही मानसिक 'भ्रम–भुलाव' है ।**

ठीक इसी तरह प्रकाश रूप 'नाम', अथवा **'आत्तिक तत्–ज्ञान'** को, **दिमागी 'विषय' ही समझनां और दिमागी ज्ञान तक सीमित रखना भी हमारा मानसिक 'भ्रम–भुलाव ही है ।**

ऐसे खोखले, अधूरे, मनोकल्पित दिमागी धार्मिक ज्ञान का **प्रचार भी**, हमारे मायिकी **'भ्रम–भुलाव' के 'भ्रम–गढ़' तक सीमित रहता है**, जो हमें 'आत्म–तत्' 'नाम' का –

तत्–ज्ञान
झलक
आत्म–प्रकाश
आत्म छोह
आत्म रस
आत्म रंग
आत्म विस्माद
सहज समाधि

के, अन्तर–आत्मा में 'निजी अनुभव' नहीं करा सकता ।

यही कारण है कि अन्नत –

धर्म
धर्म ग्रंथ
धर्म मंदिर
पाठ
पूजा
जप

तप
कर्म
क्रिया
योग
साधना
प्रयत्न

के बावजूद, संसार की मानसिक और आध्यात्मिक अवस्था दिन–प्रतिदिन गिरती जाती है ।

अंधकार सुखि कबहि न सोई है ।।
राजा रंकु दोऊ मिलि रोई है ।। (पृ ३२५)

दूसरे शब्दों में हमारा दिमागी **धार्मिक 'ज्ञान' और उसका प्रचार भी** हमारे मायिकी –

'भ्रम भुलाव'

के दायरे तक सीमित है, जिसकी 'आत्मिक–तत्' अथवा 'नाम–प्रकाश' तक पहुँच नहीं हैं ।

हमारे दिमागी अन्दाजे और कुकड़ उडारियाँ हमें **मायिकी 'अँधकार–मंडल' की 'सीमा' तक ही पहुँचा सकती हैं** । इस से दूर **आत्मिक देश** अथवा **आत्म–प्रकाश की 'झलकियाँ' नहीं दिखा सकती** । हम इन **दिमागी उड़ानों की प्राप्तियों को 'कविता' कहकर फूले नहीं समाते और इसी को आत्मिक 'प्राप्ति' समझे हुए हैं ।**

इन कवियों के सूक्ष्म, तीक्षण, कटाक्षमयी मनोभावों की उड़ानों को **'आत्म–प्रकाश' का 'जलवा' समझना भी हमारी मानसिक अज्ञानता का –**

'भ्रम–भुलाव' ही है ।

उदाहरण के रूप में 'भाई नंद लाल जी' चोटी के विदवान एवं 'कवि' थे– परंतु उनकी तीक्षण मानसिक उड़ाने मायिकी मंडल तक **'सीमित' थी** । परंतु जब उन पर दसवें पातशाह गुरू गोबिन्द सिंह जी की कटाक्षमयी ईश्वरीय 'नदरि–करम' हुई, तो उनके मन पर **आत्म प्रकाश का 'लिशकारा' लगा और उनकी विदवता और 'कविता'–'नाम रंग' में रंग गई और उनकी लेखनियों में आत्मिक 'चमक' की झलकें प्रकाश हो गई ।**

इसी तरह 'राग' अथवा 'नाद' के भी दो स्वरूप हैं –

1. बाहरी राग जो 'बुदधि' दवारा **सीखा–सिखलाया** जाता है और **साज़ों पर सुर–ताल से बजाया जाता है** ।

2. अनुभवी **'ईश्वरीय–राग'** अथवा **'अनहद धुनि'** है, जो **'जत्र तत्र दिसा विसा होइ फैलिओ अनुराग'** अनुसार, सारी सृष्टि में **लगातार एक रस रवि रही परिपूर्ण है** और अनेक मनोभावों, रूपों, तरंगों, थरथराहट, लहरों दवारा **'चुप बोली' में गूँज रही है** ।

अणमड़िआ मंदलु बाजै ।।
बिनु सावण घनहरु गाजै ।। (पृ. ६५७)

विणु वजाई किंगुरी वाजै जोगी सा किंगुरी वजाइ ।। (पृ. ६०६)

अनहद धुनी सद वजदे उनमनि हरि लिव लाइ ।। (पृ. ६१)

'ईश्वरीय राग' या **'अनहद धुनि'** अति सूक्ष्म होने कारण, हमारी **बुद्धि की सीमा से बाहर है** । सूक्ष्म वस्तु को पकड़ने के लिए, सूक्ष्म बुद्धि या **अनुभव की आवश्यकता है** । 'बाह्य राग' की सुर, लय, ताल को **सुनने या 'पकड़ने' की भी हर एक में योग्यता नहीं होती** । बहुत से लोग तो राग की **बाह्य 'टूँ–टां' सुनकर ही वाह–वाह कर देते हैं** ।

इस **'अनहद धुनि'** को सुनने और **अनुभव करने के लिए जिज्ञासु को त्रि गुणी मायिकी मंडल से ऊँचा अठकर** अपनी दैवीय–भावनाओं, रूप, तरंगों को **'ईश्वरीय नाद' की तरंगों** (vibrations) **के साथ, एक सुर** (in-tune) **करना पड़ेगा** ।

केवल बाह्य मायिकी मंडल के 'राग' द्वारा यह **'अनहद धुनि' सुनी नहीं जा सकती । अनुभवी आत्मिक 'तत्–ज्ञान' अथवा 'नाम'** अथवा **'शबद' द्वारा ही इस 'अनहद धुनि' का अनुभव हो सकता है** ।

अनहत बाणी गुर सबदि जाणी हरि नामु हरि रसु भोगी ।। (पृ. ६२१)

अनहद धुनि वाजहि नित वाजे गाई सतिगुर बाणी ।। (पृ. ४४२)

अनहदो अनहदु वाजै रूण झुणकारे राम ।।
मेरा मनो मेरा मनु राता लाल पिआरे राम ।। (पृ. ४३६)

हरि नामु सलाहिन नामु मनि नामि रहनि लिव लाइ ।।
अनहद धुनी दरि वजदे दरि सचै सोभा पाइ ।। (पृ. ४२)

सहजे अनहत सबदु वजाइआ ।।
सहजे रूण झुणकारू सुहाइआ ।। (पृ २३७)

माई री पेखि रही बिसमाद ।।
अनहद धुनी मेरा मनु मोहिओ अचरज ता के सूाद ।। (पृ १२२६)

परंतु **बाह्य सीखे–सिखाए दिमागी 'राग' को– अनुभवी' अनहद धुनि' समझना ही**, हमारी मानसिक अज्ञानता का –

'भ्रम–भुलाव' है ।

इसी तरह 'धर्म' या 'मज़हब'– परमेश्वर से **भूले और विछुड़े हुए जीवों को पुनः अपने केंद्र 'परमेश्वर' की याद कराने, और उस की ओर प्रेरित करने के लिए रचे गए थे** और इस तरह **'प्रभु–मिलाप' का साधन हैं ।**

परंतु हम धर्म को –
मायिकी जरूरतों की पूर्ति के लिए,
मानसिक **प्राप्तियों के लिए,**
सुख विलास की प्राप्ति **के लिए,**
दुख कलेशों से **बचने के लिए,**
मानसिक **शांति के लिए,**
अपने **पाप ढकने के लिए,**
यम की सज़ा से बचने के लिए,
'धार्मिक' कहलवाने के लिए,
'वाह–वाह' करवाने के लिए,
'लोक–दिखलावे' के लिए,
दिमागी **'वाद–विवाद' के लिए,**
दिमागी **शुगल के लिए,**
तथा कथित धार्मिक **ठाठ–बाठ रचाने के लिए,**
चेले–चाटड़े बनाने के लिए,
सौदेबाज़ी के लिए,
आवागमन में से निकलने के लिए,
मुक्ति की प्राप्ति के लिए,
आदि, **मायिकी मनोरथों के लिए ही अपनाते हैं** और इस धार्मिक अज्ञानता में ही **गलतान हो कर** भले–भद्र बने रहते हैं ।

कबीर काम परे हरि सिमरीऐ ऐसा सिमरहु नित ।। (पृ. १३७३)

सेवा थोरी मागनु बहुता ।। महलु न पावै कहतो पहुता ।। (पृ. ७३८)

कोटि मधे को विरला सेवकु होरि सगले बिउहारी ।। (पृ. ४६५)

हमारा ऐसा बाहरमुखी मानसिक 'धर्म' हमें माया में से निकालने की **अपेक्षा, माया के 'भ्रम–भुलावों' में ही फँसा कर रखता है, और धर्म के असली उच्च–पवित्र मनोरथ से दूर लेकर जा रहा है ।**

'धर्म' या **'मज़हब' के इन गलत निश्चयों और 'इस्तेमाल' को ही**

मानसिक 'भ्रम–भुलाव'

कहा जाता है ।

इन **धार्मिक 'भ्रम–भुलावों में से ही सारे अवगुण उत्पन्न होते हैं**, जैसे कि – वैर, विरोध, नफरत, जलन, कुढ़न, निंदा, चुगली, रोष, शक, चिंता, तृष्णा, ईर्ष्या, द्वेष, तअस्सुब, बदला, झूठ, स्वार्थ, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार एवं मैं–मेरी आदि ।

इन बाहरमुखी धर्मों के दिमागी दायरे में ही –

धर्म सथान
धार्मिक स्कूल–कॉलेज
धार्मिक प्रचार
धार्मिक लेखनियाँ
धार्मिक संस्थाएँ
धार्मिक डेरे

आते हैं, क्यों कि इन में **बाहरमुखी दिमागी धार्मिक विद्या ही सीखी–सिखाई जाती है** और **'आत्म–तत्–ज्ञान' या 'आत्मिक प्रकाश' अथवा 'नाम' के विषय में नाममात्र, ऊपरी सी, दिमागी व्याख्या ही होती है ।**

इस लिए ऐसा **बाहरमुखी धार्मिक प्रचार भी दिमागी मंडल तक सीमित रहता है** और आत्म–प्रकाश के 'तत्–ज्ञान' तक इस की 'पहुँच' नहीं है ।

पड़हि मनमुख परु बिधि नही जाना ।।
नामु न बूझहि भरमि भुलाना ।। (पृ. १०३२)

बेद पड़हि हरि नामु न बूझहि ।।
माइआ कारणि पड़ि पड़ि लूझाहि ।। (पृ १०५०)

सिमृति सासत्र पड़हि पुराणा ।।
वादु वखाणहि ततु न जाणा ।। (पृ १०३२)

पड़हि गुणहि तूं बहुतु पुकारहि विणु बूझे तूं डूबि मुआ ।।(पृ. ४३५)

दुखदायी और अफसोस की बात तो यह है कि जिस मानसिक 'भ्रम – भुलाव' में **हम स्वयं गलतान हैं** – उसी धार्मिक 'भ्रम – भुलाव' का ही प्रचार करके, आम भोली – भाली जनता को **इन धार्मिक भुलाव में ही फँसाते जाते हैं, और उनको सही आत्मिक 'जीवन – सेध' से वंचित रखते हें ।**

कबीर माइ मूंडउ तिह गुरू की **जा ते भरमु न जाइ ।।**
आप डुबे चहु बेद माहि चेले दीए बहाइ ।। (पृ १३६६ – ७०)

इस तरह बाहरमुखी धार्मिक 'भ्रम – भुलावों' में **प्रवृत्त होकर** हम अपनी **असली 'आत्मिक जीवन' सेध से वंचित रहते हैं ।**

दिमागी 'भ्रम – भुलावों' से, यह **धार्मिक 'भ्रम – भुलाव' अति सबल और सूक्ष्म हैं,** जिस कारण हमारे अंदर –

धार्मिक अह्म
धार्मिक दिखलावा
धार्मिक पाखंड
धार्मिक ईर्ष्या
धार्मिक निंदा
धार्मिक अज्ञानता
धार्मिक तअस्सुब
धार्मिक घृणा
धार्मिक झगड़े
धार्मिक लड़ाईयाँ

बढ़ती जाती हैं और हम अपने असली 'आत्म – मार्ग' अथवा **'आत्म – प्रकाश' या 'नाम' से दूर जा रहे हैं ।**

इस तरह –

'धर्म' को दिमागी दायरे तक **सीमित रखना भी** – भ्रम है ।
'धर्म' को **'मायिकी जरूरतों के लिए इस्तेमाल करना भी** – भ्रम है ।
'धर्म' के द्वारा **अकाल पुरूष के साथ 'सौदेबाज़ी' करना भी** – भ्रम है ।
'धर्म प्रचार' को दिमागी 'कला' समझना भी – भ्रम है ।
'धार्मिक ज्ञान' को **दिमागी वाद–विवाद का विषय बनाना भी** – भ्रम है ।
'धार्मिक साधनों' को आत्मिक 'मंज़िल' समझना भी – भ्रम है ।

'तत्–बह्म ज्ञान' या **'नाम–प्रकाश'**, बख्शे हुए गुरमुख प्यारों की **संगति और सेवा** करते हुए **अंतर आत्मा में अनुभव द्वारा ही हो सकता है** ।

गुरमुखि सेवा थाइ पवै उनमनि ततु कमाहु ।। (पृ. ७८८)

गुरमुखि सेवा महली थाउ पाए ।।
गुरमुखि अंतर हरि नामु वसाए ।। (पृ. १६०)

मनि तनि पिआस अरसन घणी कोई आणि मिलावै माइ ।।
संत सहाई प्रेम के हउ तिन कै लागा पाइ ।। (पृ. १३५)

संत कै संगि मिटिआ अहंकारु ।।
दृसटि आवै सभु एकंकारु ।। (पृ. १८६)

दइआल दामादरु गुरमुखि पाईऐ होरतु कितै न भाती जीउ ।।(पृ. ६८)

संत सहाई जीअ के भवजल तारणहार ।।
सभ ते ऊचे जाणीअहि नानक नाम पिआर ।। (पृ. ६२६)

गुरमुख सउ करि दोसती सतिगुर सउ लाइ चितु ।।
जंमण मरण का मूलु कटीऐ ताँ सुखु होवी मित ।। (पृ. १४२१)

संतसंगति सिउ मेलु भइआ हरि हरि नामि समाए राम ।।(पृ. ७७१)

(क्रमश.....)